अध्यात्म ज्ञान एवं चिन्तन संस्था
(SOCIETY FOR ADHYATMA STUDIES)

17, सिविल लाइन्स, कमिश्नर ऑफिस के सामने, मुरादाबाद – 244001
मो0 9412241221

ब्रह्म ज्ञान विचार गोष्ठी – 42

25.09.2011

"श्रीमद् भगवद् गीता"
पंचम् अध्याय
"कर्मसन्यास योग"

निवेदक

डॉ0 यू0 के0 शाह
शाह नर्सिंग होम,
सिविल लाइन्स, मुरादाबाद
फोन नं0 9359716440

रविन्द्र नाथ कत्याल
अमर बसेरा,
सिविल लाइन्स, मुरादाबाद
फोन नं0 9837041945

सुधीर गुप्ता, एडवोकेट
17, सिविल लाइन्स,
मुरादाबाद
फोन नं0 9412241221

श्रीमद् भगवद् गीता
अध्याय – 5
"कर्मसन्यास योग"

अर्जुन उवाच–
संन्यासं कर्मणा कृष्ण पुनर्योगं च शंससि।
यच्छ्रेय एतयोरेकं तन्मे ब्रूहि सुनिश्चितम्।।

अर्जुन ने कहा –
हे कृष्ण! आप कभी कर्मों में सन्यास की (अर्थात मन, इन्द्रियों और शरीर द्वारा होने वाले सम्पूर्ण कर्मों में कर्तापन का त्याग) और कभी निष्काम कर्मयोग की प्रशंसा करते हैं लेकिन इनमें से मेरे लिये कौन सा अधिक ठीक है वह निश्चित करके मुझे बताइये।

श्रीभगवान उवाच –
संन्यासः कर्मयोगश्च निःश्रेयसकरावुभौ।
तयोस्तु कर्मसंन्यासात्कर्मयोगो विशिष्यते।।

श्रीभगवान ने कहा–
सन्यास और निष्काम कर्मयोग यह दोनो ही कल्याण करने वाले हैं लेकिन उनमें से कर्मसन्यास के मुकाबले निष्काम कर्मयोग ही श्रेष्ठ है।

ज्ञेयः स नित्यसंन्यासी यो न द्वेष्टि न कान्क्षति।
निर्द्वन्द्वो हि महाबाहो सुखं बन्धात्प्रमुच्यते।।

हे अर्जुन! जो पुरुष न किसी से द्वेष करता है और न किसी चीज की आकांक्षा करता है वह सदा सन्यासी ही है क्योंकि राग, द्वेष आदि द्वन्द्वों से रहित हुआ व्यक्ति आसानी से संसार के बंधनों से मुक्त हो जाता है।

सांख्ययोगौ पृथग्बालाः प्रवदन्ति न पण्डिताः।
एकम् अपि अस्थितः सम्यक् उभयोः विन्दते फलम्।।

सांख्य (अर्थात ज्ञानयोग) और योग (अर्थात निष्काम कर्मयोग) को अलग–अलग केवल नासमझ व्यक्ति ही कहते हैं विद्वान व्यक्ति ऐसा नहीं कहते क्योंकि इन दोनो में से एक को भी अच्छी प्रकार पालन करने वाला दोनो के फल को प्राप्त करता है।

यत्सांख्यैः प्राप्यते स्थानं तत् योगैः अपि गम्यते।
एकं सांख्यं च योगं च यः पश्यति स पश्यति।।

ज्ञानयोगियों द्वारा जो परम धाम प्राप्त किया जाता है निष्काम कर्मयोगियों द्वारा भी वही प्राप्त किया जाता है। इसलिये जो पुरुष ज्ञानयोग और निष्काम कर्मयोग को एक ही देखता है वह ही वास्तविक रुप से देखता है।

संन्यासस्तु महाबाहो दुःखम् आप्तुम् अयोगतः।
योगयुक्तो मुनिर्ब्रह्म नचिरेण अधिगच्छति।।

परन्तु हे महाबाहु! निष्काम कर्मयोग के बिना सन्यास अर्थात मन, इन्द्रियों और शरीर द्वारा होने वाले सम्पूर्ण कर्मों मे अकर्तापन का ज्ञान होना कठिन है। निष्काम कर्मयोग में लगा हुआ और मनन करने वाला व्यक्ति शीघ्र ही ब्रह्म को प्राप्त हो जाता है।

योगयुक्तो विशुद्धात्मा विजितात्मा जितेन्द्रियः।
सर्वभूतात्मभूतात्मा कुर्वन्नपि न लिप्यते।।

जिस निष्काम कर्मयोगी का अंतःकरण शुद्ध है, जिसने स्वयं को वश में किया हुआ है, जिसने इन्द्रियों को वश में किया हुआ है और जो सम्पूर्ण प्राणियों के जीव स्वरुप को एक ही आत्मा मानता है, ऐसा व्यक्ति कर्म करते हुये भी उनसे संलिप्त नहीं होता है।

नैव किंचित्करोमीति युक्तो मन्येत तत्त्ववित्।
पश्यन् शृण्वन् स्पृशन् जिघ्रन् अश्नन् गच्छन् स्वपन् श्वसन्।।

तत्व को जानने वाला सांख्य योगी यह समझता है कि मैं कुछ भी नहीं कर रहा हूं। वह देखता हुआ, सुनता हुआ, स्पर्श करता हुआ, सूंघता हुआ, भोजन करता हुआ, चलता हुआ, सोता हुआ, सांस लेता हुआ भी यह जानता है कि वह कुछ नहीं कर रहा है।

प्रलपन् विसृजन् गृह्वन् उन्मिषन् निमिषन् अपि।
इन्द्रियाणि इन्द्रियार्थेषु वर्तन्त इति धारयन्।।

इसी प्रकार वह बोलता हुआ, त्यागता हुआ, ग्रहण करता हुआ, आंखों को खोलता या बंद करता हुआ यह समझता है कि सब इन्द्रियां अपने–अपने विषयों में गति कर रही हैं और वह कुछ नहीं कर रहा है।

(आत्मा द्वारा ये क्रियायें नहीं की जा रही हैं तथा तत्व ज्ञानी जानता है कि वह आत्मा ही है।)

ब्रह्मणि आधाय कर्माणि संगम् त्यक्त्वा करोति यः।
लिप्यते न स पापेन पद्मपत्रम् इव अम्भसा।।

जो पुरुष सब कर्मों को ईश्वर में अर्पण करके और आसक्ति को त्याग कर कर्म करता है वह कमल के पत्ते पर पड़ी जल की बूंद की तरह से पाप से लिप्त नहीं होता।

कायेन मनसा बुद्धया केवलैः इन्द्रियैः अपि।
योगिनः कर्म कुर्वन्ति संगम् त्यक्त्वा आत्मशुद्धये।।

निष्काम कर्मयोगी शरीर द्वारा, मन द्वारा, बुद्धि द्वारा और इन्द्रियों द्वारा आसक्ति को त्याग कर अन्तःकरण की शुद्धि के लिये कर्म करते हैं।

युक्तः कर्मफलं त्यक्त्वा शान्तिमाप्नोति नैष्ठिकीम्।
अयुक्तः कामकारेण फले सक्तो निबध्यते।।

निष्काम कर्मयोगी कर्मों के फल को ईश्वर को अर्पण करके निष्ठापूर्वक शान्ति को प्राप्त होता है जबकि सकामी पुरुष फल की कामना में आसक्त होने के कारण स्वयं बंध जाता है।

सर्वकर्माणि मनसा संन्यस्यास्ते सुखं वशी।
नवद्वारे पुरे देही नैव कुर्वन्न कारयन्।।

सब कर्मों को मन से त्याग कर कुछ भी न करता हुआ और न करवाता हुआ तथा अन्तःकरण को अपने वश में रखने वाला योगी इस नौ द्वारों वाले शरीर रुपी घर में आनन्दपूर्वक रहता है।

न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभुः।
न कर्मफलसंयोगं स्वभावस्तु प्रवर्तते।।

ईश्वर इस लोक के जीवों के कर्तृत्व को या कर्मों को या कर्मों के फल को रचता नहीं है, बल्कि स्वभाव (प्रकृति) द्वारा ही यह कर्म होते हैं।

नादत्ते कस्यचित्पापं न चैव सुकृतं विभुः।
अज्ञानेन आवृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः।।

ईश्वर किसी के भी पाप कर्म को अथवा शुभ कर्म को ग्रहण नहीं करता है किन्तु अज्ञान (माया) के द्वारा ज्ञान ढका हुआ है जिस कारण सब जीव मोहित हो रहे हैं।

ज्ञानेन तु तदज्ञानं येषां नाशितमात्मनः।
तेषाम् आदित्यवत् ज्ञानं प्रकाशयति तत्परम्।।

परन्तु जिनके अन्तःकरण का अज्ञान आत्मज्ञान द्वारा नष्ट हो गया है उनका वह ज्ञान सूर्य के सदृश उस परम ब्रह्म को प्रकाशित कर देता है अर्थात उसके स्वरुप को उजागर कर देता है।

तद्बुद्धयः तदात्मानः तन्निष्ठाः तत्परायणाः।
गच्छन्ति अपुनरावृत्तिं ज्ञाननिर्धूत कल्मषाः।।

जिस व्यक्ति की बुद्धि ईश्वर में रम गयी है, जिसका मन ईश्वर में रम गया है और जिसकी निष्ठा ईश्वर में हो गई है ऐसा व्यक्ति ज्ञान के द्वारा पापरहित होकर परम गति को प्राप्त करता है उसकी पुनरावृत्ति नहीं होती।

विद्याविनयसंपन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः।।

ज्ञानीजन विद्या और विनय से युक्त ब्राह्मण में तथा गाय, हाथी, कुत्ते और चाण्डाल में भी कोई अन्तर नहीं देखते हैं।

इह एव तैः जितः सर्गो येषां साम्ये स्थितं मनः।
निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्मात् ब्रह्मणि ते स्थिताः।।

जिनका मन सम भाव में स्थित है उन्होने तो इस अवस्था में ही सम्पूर्ण संसार को जीत लिया है क्योंकि ब्रह्म दोषरहित और सम है इस कारण वे व्यक्ति भी ब्रह्म में ही स्थित हैं।

न प्रहृष्येत् प्रियं प्राप्य न उद्विजेत् प्राप्य च अप्रियम्।
स्थिरबुद्धिः असुमूढः ब्रह्मवित् ब्रह्मणि स्थितः।।

जो प्रिय को प्राप्त करके हर्षित नहीं होते और अप्रिय को प्राप्त करके उत्तेजित नहीं होते ऐसे स्थिर बुद्धि, संशय रहित, ब्रह्मवेत्ता व्यक्ति ब्रह्म में ही स्थित रहते हैं।

बाह्यस्पर्शेषु असक्तात्मा विन्दति आत्मनि यत्सुखम्।
स ब्रह्मयोगयुक्तात्मा सुखम् अक्षयम् अश्नुते।।

बाहर के विषयों मे अर्थात सांसारिक भोगों में जिसकी आसक्ति नहीं है ऐसा व्यक्ति अपने अंतःकरण में जो सुख स्थित है उसको प्राप्त करता है तथा वह ईश्वर से जुड़ जाने के कारण अक्षय आनन्द अनुभव करता है।

ये हि संस्पर्शजा भोगा दुःखयोनय एव ते।
आद्यन्तवन्तः कौन्तेय न तेषु रमते बुधः।।

जो इन्द्रियों एवं विषयों के संसर्ग से उत्पन्न होने वाले भोग हैं वे ही निःसन्देह दुख के कारण हैं और आदि और अन्त वाले हैं अर्थात अनित्य हैं। इसलिये हे अर्जुन! बुद्धिमान व्यक्ति उनमें नहीं रमता।

शक्नोति इहैव यः सोढुं प्राक् शरीर विमोक्षणात्।
कामक्रोधः उद्भवं वेगं स युक्तः स सुखी नरः।।

जो मनुष्य शरीर के नाश होने से पहले ही काम और क्रोध से उत्पन्न हुये वेग को सहन करने में समर्थ है अर्थात जिसने काम–क्रोध को सदा के लिये जीत लिया है वह मनुष्य ही योगी है और वही सुखी है।

योऽन्तःसुखः अन्तरारामः तथा अन्तर्ज्योतिः एव यः।
स योगी ब्रह्मनिर्वाणं ब्रह्मभूतः अधिगच्छति।।

जो अपने अंतःकरण में ही सुख प्राप्त करता है, अंतःकरण में ही रमण करता है तथा जिसमें आत्मज्ञान का प्रकाश है ऐसा योगी ब्रह्म स्वरुप होकर निर्वाण प्राप्त करता है।

लभन्ते ब्रह्मनिर्वाणम् ऋषयः क्षीणकल्मषाः।
छिन्नद्वैधा यतात्मानः सर्वभूतहिते रताः।।

जिनके सब पाप नष्ट हो गये हैं और ज्ञान द्वारा जिनके सब संशय समाप्त हो गये हैं और जो सभी प्राणियों के हित में लगे हैं और जिनका ध्यान आत्मा में लगा है ऐसे ऋषि परब्रह्म को प्राप्त करते हैं।

कामक्रोधवियुक्तानां यतीनां यतचेतसाम्।
अभितो ब्रह्मनिर्वाणं वर्तते विदित आत्मनाम्।।

जो काम–क्रोध से रहित हो गये हैं, जिन्होने अपने चित्त को जीत लिया है, जिन्होने आत्मा को जान लिया है ऐसे ज्ञानी व्यक्तियों को परब्रह्म सभी ओर से प्राप्त होता है।

स्पर्शान् कृत्वा बहिर्बाह्यान् चक्षुः चैव अन्तरे भ्रुवोः।
प्राणापानौ समौ कृत्वा नासाभ्यन्तर चारिणौ।।

जो मुनि बाहर के विषय भोगों को बाहर ही छोड़कर और नेत्रों की दृष्टि को भृकुटि के बीच में स्थित करके नासिका में चलने वाले प्राण और अपान वायु को बराबर करता है

यतेन्द्रियमनोबुद्धिः मुनिः मोक्षपरायणः।
विगत इच्छाभयक्रोधः यः सदा मुक्त एव सः।।

जिसने अपनी इन्द्रियां, मन और बुद्धि पर नियन्त्रण कर लिया है और जो इच्छा, भय और क्रोध से रहित हो गया है ऐसा मोक्ष की इच्छा करने वाला मुनि सदा मुक्त ही है।

भोक्तारं यज्ञतपसां सर्वलोकमहेश्वरम्।
सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छति।।

जो मुझको यज्ञ और तपों का भोगने वाला और सब लोकों का महा ईश्वर तथा सब प्राणियों का मित्र जानता है वह शान्ति को प्राप्त करता है।

।। इति पंचमोध्याय ।।